INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL

ISSN: 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 7 | ISSUE - 1 | FEBRUARY – 2017

महिला लेखन में संबंधों को नई परिभाषाएं देती नारीः उपन्यास एवं कहानी विश्लेषण

डॉ. सीमा सिहँ
सहायक प्रोफसर, हिन्दी दयानंद महिला महाविद्यालय, कुरुक्षेत्र।

पस्तावना :

प्रस्तुत शोध–पत्र में हिन्दी साहित्य में नारी के सम्मान, व्यक्तित्व, अस्तित्व की खोज और उसके हर पक्ष का मूल्यांकन प्रस्तुत करना शोध–पत्र का विषय रहा है। सामाजिक जागृति की लहर ने उसके जीवन में भी दस्तक दी। वह पर पुरूषों के सम्पर्क में भी आई। अर्थोपार्जन ने उसे आत्मविश्वासी भी बना दिया है तथा निर्णय लेने का साहस वह कर पाई है। नारी का यह रूप परम्परागत रूप से हटकर था, जो पितृसत्तात्मक परम्परागत समाज को मान्य नहीं था। इससे उसके दाम्पत्य सम्बंधें में तनावों का सिलसिला शुरू हुआ। वह जब भी एंकात पाती है, सोचती है, गलत–सही के फैसलों में वह कोई राय नहीं रख पाती, परन्तु वह मूल्यांकन करती हैं अपने आप में, सोचती है हर पल, और घुटती भी इसीलिए है। इसी घुटन, तनाव और संघर्ष को प्रस्तुत शोध–पत्र सामने लाता है।

समाज के परिवर्तन के साथ साहित्य भी बदलता है। कभी वह उस परिवर्तन का उत्प्रेरक होता है और कभी प्रतिस्पर्धी के रूप में भी सामने आता है। समय के साथ–साथ समाज की परिस्थितियाँ, सामाजिक मूल्य, परम्पराएं, मान्यताएँ सभी में स्वभाविक बदलाव आता है। समाज के इन बदलावों को साहित्य अपने माध्यम से अभिव्यक्त करता है। साहित्य भी कभी–कभी परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। सृष्टि के आरंभ से लेकर वर्तमान तक की कहानी मानव जाति के कल से आज में प्रवेश की कहानी है, सभ्यता की विभिन्न सीढियों को पार करके आज का मानव चांद, ग्रहों को माप रहा है, जमीन

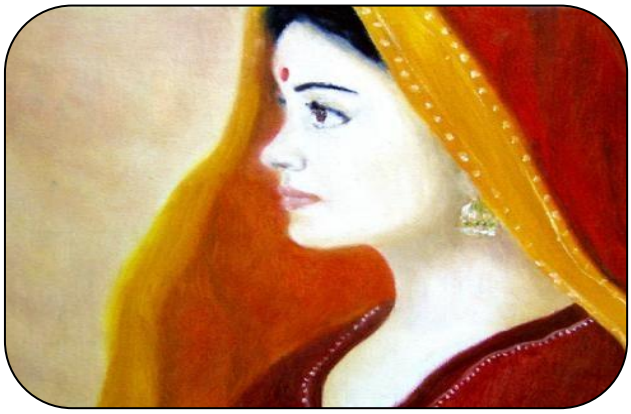

के साथ–साथ आकाश और पाताल में सैर कर रहा है। मानव की जागरूकता, गंभीर प्रयास, चेतना और नये विमर्श उसे यहां तक ले कर आने में मार्ग निर्देशक रहे हैं। यही 'विमर्श' उसे सही–गलत, उन्नति–अवनति, विकास–विनाश, सभ्य–असभ्य की पहचान करना भी सिखाते हैं।

हिन्दी उपन्यासों में नारी

भारतीय समाज, ऐसा समाज है जो सिर्फ इसकी संस्कृति और परम्पराओं के लिए सारे विश्व में जाना जाता है। औरत के 'पर–निर्भर' होते चले जाने के पिछे भी इन्हीं रूढ़ियों और गली–सड़ी परम्पराओं का हाथ है। 'पायदान' में सोना चौधरी ने घर में औरतों के साथ होने वाल व्यवहार को दर्शाते हुए लिखा, ''मजदूरों और घर की महिलाओं में काम को लेकर कोई अन्तर न था। दोनों से ही कोल्हू के बैल की तरह काम लिया जाता और एक जैसा खाने को दिया जाता। ''[1] यहां तक कि हमारे समाज में तो औरत का नाम ही नहीं होता। वह केवल किसो की मां होती है, किसी की पत्नी और किसी की बेटी। 'हवेली से बाहर' की निर्मला सही कहती है, ''औरत का नाम इधर कोई नहीं जानता। बाबा कहते हैं जोरू का नाम नहीं होता। नाम तो सिर्फ मर्द का होता है। औरत भी मर्द की होती है। अम्मा भी तो यही कहती है।''[2]

'ठंडो आग' इन्द्रपाल सिंह 'इन्द्र' की नायिका मैथिली अपनी पिता की खुशी के खातिर पिता समान व्यक्ति से विवाह करके जब आठ दिन बाद मायके आती है तो अपनी हृदयावस्था को छुपाकर बाहरी खुशी को प्रकट करती है। '' उसने अपनी चाची से ससुराल के वैभव का, वहां के रहन–सहन का, खान–पान का, नौकरों की सेवा चाकरी का, सुख–सुविध का बढ़ा–चढ़ा कर वर्णन किया।''[3]

'पासंग' की बानोअप्पा, प्रेमी से विवाह करना चाहती थी, उसके बच्चे की मां बनने वाली है। परन्तु साम्प्रदायिक दंगों से हालात ऐसे बनते हैं कि प्रेमी को परिवार के साथ पाकिस्तान जाना पड़ता है। उसके अन्दर परिस्थितियों को लेकर एक टीस है, जो बार–बार उभर कर सामने आती है, '' समाज और परिवार तो अपनी शर्तों पर जीने की मोहलत देते और इजाजत देते हैं। हम अपनी मर्जी से नहीं जी सकते, उनकी शर्तों पर ही जीना पड़ता है।''[4] 'अभियान' में निलय उसी बात को मुद्दा बनाता है, जहां नारियों की कोई पहचान नहीं समझी जाती, ''उनके नाम चाहे जो हों, गाँव में औरतों के नाम गुम हो जाते हैं। कभी कोई ऐसी जरूरत ही नहीं आती जिसमें उनके नाम की जरूरत हो। उन्हें उनके पतियों के नाम से ही जाना जाता है।''[5]

नारी से किस प्रकार एक व्यक्तित्व, मां, पत्नी, बहु, बेटी बन जाती है, और उसे कांट–छांट कर बने–बनाए ढांचों में फिट करने की कोशिशें की जाती हैं, उन्हीं का चित्रांकन कनकलता ने 'बोन्साई' में किया है। गार्हस्थिक आदर्शों की कैंची से ससुराल के लोग शुभा को लेखकीय प्रतिभा की जड़ों को बड़े खूबसूरत ढंग से तहस–नहस कर डालते हैं। प्रतिभा की बर्बादी के एवज में उसे हर्जाना मिलता है, ''मुट्ठी भर तसल्लियां और टोकरी भर लांछन।''[6]

'इदन्मम' उपन्यास नारी शक्ति के विविध आयामों को खोजने का साहसिक प्रयोग है। आज की नारी को नये विचारों की हवा की महक महसूस हो रही है। अपने परिवेश के प्रति उसमें एक निरंतरता विद्यमान है। महाभारत, पुराण सब उसके लिए अवसरवादी प्रसंग हैं। मंदा बाऊ से कहती है, '' ये सब अवसर वादी प्रसंग है, पुरुष प्रधन समाज जो एक और पतिव्रत धर्म की परिभाषा करता राम के साथ सीता–वन गमन, दूसरी और उसी निष्ठा को तोड़ता मर्यादा पुरुषोत्तम राम का सीता की अग्नि परीक्षा लेना। रामायण में, पुराणों में, महाभारत में कौन सही था, कौन गलत, क्या ग्रहण करने योग्य है, क्या नहीं, यह अपने विवेक से देखों जरूर, पर परखो अपनी बुद्धि से।''[7] ये उस परम्परागत नारी का विद्रोह है जो लगातार सहते रहकर भी सम्मान की भागी नहीं बन पाती। उसे लगने लगा है कि हमारा धार्मिक साहित्य भी केवल, नारी के शोषण के लिए ही बना है।

'अगनपाखी' की नायिका भुवन का विवाह उसकी राय जाने बिना जिस व्यक्ति के साथ जोड़ दिया जाता है। वह अर्धविक्षिप्त है। परन्तु वह अपनी विवशता किसी से कह नहीं पाती। इस व्यवस्था में वह अपने आपको नितांत अकेला अनुभव करती है, '' जब आदमी को कोई नहीं दिखता तब भगवान दिखता है। भुवन सुबकियाँ लेकर देवी को पुकार रही है।''[8]

पराम्पराओं से जकड़ी हुई नारी कहां खुश दिखती है। 'आओ पेपे घर चले' में प्रभा खेतान नारी को केन्द्र में रख कर साहित्य सृजन करती है। आइलिन कहती है, ''औरत कहां नहीं रोती और कब नहीं रोती? वह जितना भी रोती है, उतनी ही औरत होती जाती है।''[9] इसी प्रकार 'छिन्नमस्ता' की प्रिया एक स्थान पर कहती है, ''औरत कहां नहीं रोती? सड़क पर झाड़ु लगाते हुए, खेतों में काम करते हुए, एयरपोर्ट पर बाथरूम साफ करते हुए या फिर सारे भोग ऐश्वर्य के बावजूद .....पलंग पर रात–रात भर करवटें बदलते हुए .....हजारों सालों से इनके ये आंसू बहते आ रहे हैं।''[10] ये आंसू सभी परम्पराओं की मारी स्त्रियों को बहाने पड़ते ह

मैत्रोयी पुष्पा ने 'अल्मा कबूतरी' के माध्यम से नारी का प्रत्येक पक्ष से चित्रण किया है और उनकी समस्याओं का सूक्ष्मता से विश्लेषण किया है। 'भूरी' एक ऐसो नारी पात्र है जो परम्परागत नियमों को तोड़ते हुए अपने बेटे को पढ़ने के लिए भेजती है। वह नहीं चाहती कि उसका बेटा रामसिंह भी बड़ा होकर कबूतरा बनें। वह इसके लिए पूरे समाज को धत्ता बताती है। तो समाज के ठेकेदार कहते हैं, ''इस निडर बेहया को नदी ताल में डुबोना आसान नहीं, तैरकर निकल न पाए। गले में भारी पत्थर बांधें। नहीं तो यह बिरादरी के लिए शेरनी की तरह खूंखार हो उठेगी।''[11] और एक झुंड औरत को लाश बनाकर ले जाता हुआ तेज कदमों चल रहा था। अपनी सफलता पर खुश और कबूतरा जाति की मर्यादा को बचान को गर्वित लोग आगे ही आगे बढ़ रहे थे।''[12] फिर वह ऐसी औरतों को मारने से भी नहीं चुकते। 'बेतवा बहती रहे' की उर्वशी जब अपने अधिकारों तथा अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करती है, तो बरजोर सिंह जैसे काम पिपासु व्यक्ति उसे जहर देने से नहीं हिचकते, ''अकेल बैद की का बिसात हती? छोटी..... बरजोर ने दिनारी धिमी गति का जहर दिवा दई उखसीं को। बहौत खटकन लगी थी अब।''[13]

'चाक' उपन्यास में भी रूढ़िग्रस्त समाज में औरतों की इच्छाओं के दमन की कहानी है। इस में अतरपुर गांव का परिवेश है जहां, ''रस्सी के फन्दे पर झूलती रूक्मिणी, कुंए में कूदने वाली रामदेई, करबन नदी में समाध्स्थि नारायणी.....ये बेबस औरतें सीता मइया की तरह 'भूमि प्रवेश' कर अपने 'शील–सतीत्व' की खातिर कुरबान हो गई। ये ही नहीं और न जाने कितनी।''[14]

'झूला नट' में भारतीय समाज का पति आज भी अपनी पत्नी को भोग्या मात्रा मानता है। पति अपनी पत्नी की उपेक्षा करता है, जिसकी परिणति कई बार अवैध सम्बन्धों के रूप में होती है। अगर पत्नी पति के अनुरूप सुन्दर नहीं है तो, ''सुनो अम्मा, मैं तमाशा करना नहीं चाहता.....नहीं तो अभी हाल.....इस साली की चुटिया पकड़ चौखट के बाहर तक घसीट लाता।''[15] उसे यह सब सुनना ही पड़ेगा। उसके पति को शर्म महसूस होती है अपनी पत्नी को सामने लाते हुए, ''तुम्हारी छः उंगलियों वाली कल्लू बहू मेरे दोस्त को रोटी परोसने ही आ जाती, तो वह कल के दिन मुझे बोलने नहीं देता। काले गोरे दो रंग, पर तुम्हारी बहु तो नीली है, बैंगनी ।''

पति, पत्नी को अपनी निजी सम्पति समझकर उसके साथ कैसा भी व्यवहार कर सकता है। 'हवेली से बाहर' का जीणु जंमीदार अपनी पत्नी को 'ओ भगतन' कहकर ही हमेशा पुकारता है। '' जैसे कोई स्वामी अपनी पालत् बिल्ली या कुत्ते जैसी चीज को पुकार रहा हो या किसी बेजान वस्तु को जिस पर उसका मालिकाना हक रहा हो.....। औरत तो ठहरी पैर की जूती। उसे मुंडी पर चढ़ाने से तो रहा।''[16]

उपरोक्त बातों से केवल परम्पराओं में जकड़े हुए व्यक्ति ही नहीं बल्कि आधुनिक कहलान वाले पुरुष भी संकीर्ण मानसिकता से मुक्त नहीं हो पाते। 'दौड़' एक दूसरा पक्ष भी उजागर करता है। जो समकालीन उपन्यास का ही नहीं बल्कि सामाजिक बंध्नों में जकड़ी लड़की के लिए भी सुखद है। ''मां जब से मैंने होश संभाला, तुम्हें स्कूल और रसोई के बीच दौड़ते ही देखा। मुझे याद है जब मैं सोकर उठता, तुम रसोई में होती और जब मैं सोने जाता, तब भी तुम रसोई में होती। तुम्हें चाहिए कि स्टैला के लिए जीवन भट्ठी न बने। जो तुमने सहा, वह क्यों सहे?''[17] वह दाम्पत्य जीवन में तालमेल को लेकर भी स्पष्ट विचार रखता है,'' तालमेल बड़ा गड़बड़ शब्द है। इसके लिए मैं न स्टैला की बाधा बनूंगा, न वह मेरी। हमने पहले ही यह बात साफ कर ली है।''[18]

'गली नं॰ तेरह' की विकलांग महिला को उसका पति इसलिए छोड़ कर दूसरी पत्नी ले आता है क्योंकि वह दुर्घटना में एक पैर खो चुकी है। एक दिन लेखक अचानक रास्ते में मिल जाता है, तो उसके साथ चलते हुए हिचकिचाता है। उसकी हिचकिचाहट भांप कर विकलांग महिला आत्मविश्वास से भर कर कहती है, जो कहीं ना कहीं उसके अन्दर दबा दर्द भी है, '' आप

मेरे शरीर के उस हिस्से को मेरा व्यक्तित्व समझ रहे हैं, जो अब मेरे साथ नहीं है।''[19] 'वाह कैंप' में गुनी राम नारी धर्म समझाते हुए कहता है, ''समझ ले तू बिशन की बेटी ! हमारे कुटुंब में ऐसा रिवाज है कि मर्द बात कर रहे हों, तो औरतें और फिर बहु–बेटियां इस तरह बीच में दखल नहीं देती।''[20] 'अगन पाखी' की नायिका भुवन अपने पति के साथ अभिशप्त जिन्दगी जीने को विवश है। उसके ये उद्‌गार नारी की शाश्वत पीड़ा को व्यक्त करते हैं,'' मैं जानती हूं जनी अपने आदमी की कमी–वमी किसी से कहती नहीं है। पति की कमजोरी जनी की लाचारी बन जाती है ''[21]

आज के तथाकथित सभ्य समाज में पढ़ी लिखी नारी को पुरुष की बरारबी का दर्जा नहीं दिया जाता। 'विजन' उपन्यास की डॉ॰ नेहा यद्यपि अपने पति डॉ॰ अजय से अध्कि योग्य और कुशल नेत्रा चिकित्सक है, फिर भी डॉ॰ अजय तथा उसके पिता डॉ॰ आर॰ पी॰ शरण उसे अपने से अधिक योग्य नहीं मानते हैं तथा उसकी योग्यता की इसलिए उपेक्षा करते हैं कि वह नारी है। डॉ॰ नेहा कहती है, अजय ! पढ़े–लिखे डाक्टर, मनुष्य की शारीरिक और मानसिक बनावट को समझने वाले। उसका कलेजा खण्ड–खण्ड हो जाता है। ऐसा न होता तो औरतें जिसे केवल अपना समझती हैं, उस अग्नि–साक्षी किए पति से शिकायत करने की सजा क्यों पाती हैं?''[22] बल्कि वह सरेआम कहता है, ''तो विरासत का नाम मुझे सुनाया जा रहा है। यह मत भूलो प्रिया कि मैं पुरुष हूं, इस घर का कर्ता । यहां मेरी मर्जी चलेगी, हां सिर्फ मेरी।''[23] और अगर पत्नी कामकाजी, कमाकर लाने वाली है तो, पति और भी ज्यादा जोर लगा कर अपने अह्म को बचाना चाहता है।

कहीं–कहीं वह एक मानसिक रोगी की तरह भी व्यवहार करता है। ''कभी कहता, वह उसे गोदी में लिटाकर स्तनपान करवाए, कभी कहता, सारे कपड़े उतारकर, लॉलीपॉप चूसते हुए, नर्सरी राइम्स, गाए, कभी उसकी नग्न तस्वीरे खींचता।''[24] फिर एक बालात्कार पहले अस्मिता पर, अब शिशु पर। ''[25] हर कहीं पत्नी, कभी–ना–कभी बलात्कार की शिकार होती है। पति पर कोई अंकुश नहीं क्योंकि यह उसका निजी मामला है।

'माई' में घर की बहु, पत्नी और दो बच्चों की मां, ''सिर झुकाये, आंखें जमीन पर गड़ाए, दूसरों की सुनने, दूसरों की मर्जी पूरी करने के लिए माई थी। हांलाकि माई की यही एक बात थी जो दादी समेत सब तक को भाती थी। 'हंमी ने देखा कि बाबू ने आंख बस उठा भर दी और माई सिमटकर दरवाजे की ओट में भेड़ की तरह सट गयी और हम उस 'बेचारी' को बचाने के लिए आगे आ कर खड़ हो गए।''[26]

'समझौते से पहले' में पति, सत्ता और धन की खातिर अपनी पत्नी को वस्तु की तरह प्रयोग करता है। पत्नी की बेबसी इन शब्दों में सामने आती है, '' अब समझौता कर लिया है मैंने इस जीवन से ! मुझे पता चला गया है कि सत्ता के वर्तमान धन्ध में हम पत्नियां गैग की सांझी सम्पति हैं।''[27] 'पायदान' को कशिश बताती है, ''हमारी परवरिश ने हमारे अचेतन में कुछ ऐसा भर दिया था जो हमसे वैसा कराता रहा। ''[28] 'छिन्नमस्ता' की प्रिया भी दैहिक शोषण से क्षुब्ध है, वह भी अपने सगे बड़े भाई द्वारा, ''तो मेरे असमय पकने का कारण बड़े भैया हैं। बस वह एक समझ से शरीर के पोर–पोर म जहर रिस गया।''[29]'कठगुलाब' की स्मिता भी अपने जीजा की कामुक हरकतों का शिकार होती है, ''दरवाजे पर जीजा ने दबोच लिया। एक भरपूर चुंबन ओठों पर दकर बोला, ऐसे जाकर चूम उसे। फिर देख, कैसे नहीं करता शादी।''[30] आगे चलकर यही जीजा उसके साथ बलात्कार करता है। अब समय आ गया है कि समाज को नारी की सुरक्षा की दुहाई दे कर चारदिवारी में कैद करने से रुकना चाहिए।

हिन्दी कहानी में नारी

आज की नारी न केवल आत्मसम्मान के लिए सजग है, बल्कि परम्परागत रूढ़ियों के चलते अपने अस्तित्व को भी बचाए रखने का संघर्ष करती है। 'रिक्ति' की इला अपने पति की मृत्यु के उपरांत भी सुहागिनों की तरह रहती है। पूछने पर सीधा सा जवाब, ''क्या बताऊं, जिज्जी, कितना प्यार करते थे वे मुझे, भूल ही नहीं पाती हूं। वे नहीं रहे, पर उनकी निशानी यह बिंदो और सिदूंर.....''[31]

चन्द्रकान्ता की 'लगातार युद्ध' गुरप्रित के अस्तित्व को बचाए रखने का संघर्ष है ''उसके पास रोने–धोने से ज्यादा जरूरी काम हैं।''[32]

पुतले' कहानी की पत्नी, कारगिल में युद्धरत्त बहादुर जवानों के लिए बने 'वीर जवान फंड' में कुछ आर्थिक योगदान करना चाहती है, लेकिन पति उसकी इस इच्छा का न सिर्फ उपहास उड़ाता है बल्कि सिरे से ही खारिज कर देता है। पत्नी सोचती है– 'वह क्या समझे इसे? हैसियत का सवाल, अधिकारहीनता, पराधीनता की फांस, पौरूषीय वर्चस्व का दंभ? आपसी विश्वास के परिवृत पर पड़ती रोशनी कौन स कोने से धूमिल होने जा रही है?''[33] अपने अस्तित्व की अनदेखी के दंश को झेलती पत्नी यहां हताश जरूर है, लेकिन अंत में इस समूची घटना का विश्लेषण भी करती है वह इस प्रकार टूटकर बिखरने से बचती है। और टूटकर बिखर जाने से बचना ही नारी को निरंतर जूझने का संकल्प सौंपता है।

कृष्णा सोबती की 'ऐ लड़की' कहानी की मां ;अम्म् की आकांक्षा थी 'पहाड़ियों की चोटियों पर चढ़ूं। वह अपनी बेटी के आजाद जीवन को यह कहते हुए सराहती है, ''तुम्हारे लिए मैं निश्चिंत हूं न तुम सताई जा सकती हो और न किसी को सताती हो।''[34]

अल्पना की 'ऐ अहिल्या' कहानी की नारी पात्र रूपा अपना मनचाहा निर्णय लेती है। वह भी पुरूष की तरह छूट चाहती है पर आवारगी नहीं। वह सिगरेट पीती, बीड़ी पीती, सीटी बजाती और कभी–कभी आवारागर्दी भी। वह धर्म को औरतों के प्रति शोषण का हथियार मानती है। ''औरतों के मामले में सारे धर्म एक ही जगह आकर रूक जाते हैं।''[35] 'खुदा की वापसी' की फरजाना शौहर के घर ना लौटने का ही फैसला कर लेती है ताकि परिवार को भी अहसास हो कि उसकी पढ़ाई छुड़वा कर शादी कर देना गलत था। ''ऐसे झूठे, जाहिल शौहर के घर लौटकर क्या जाना, वहीं मायके में रहकर माँ–बाप को भी सीख देनी चाहिए

कि मुझे आगे पढ़ाने की बजाए मेरी शादी क्यों कर दी गई?''[36]

नारी हर पक्ष पर अपने विचार रखती है। वह आज इससे संतुष्ट नहीं होती, कि उसके जीवन के अहम फैसले कोई और ले। जब वह अपने फैसले लेने लग जाएगी, तो वह केवल एक औरत नहीं बल्कि एक व्यक्ति के रूप में भी पहचानी जाएगी।

आज नारी में पति द्वारा किए गए व्यवहार को न सहने का आत्मविश्वास भी जाग रहा है। वह चीजों को यूं का यूं नहीं लेती। अब सच्चाई को जानकर वी खामोश नहीं रहती। एक संघर्षशील स्त्री का दुर्दम आशावाद राजी सेठ की कहानियों को उर्जा और विश्वास का नया चेहरा सौंपता है रोती–रिरियाती, आंसू बहाती स्त्री उनका विषय नहीं हो सकती। अगर कहीं वह हाशिए पर भी है तो अपनी पूरी इयत्ता और स्वाभिमान के साथ। उसकी टूटन में भी उसका इरादा आलोक की तरह कौंधता है। इस नारी का एक आदमकद चेहरा 'मेरे लिए नहीं' कहानी में प्रीति के तौर पर उभरता है, '' जिंदगी मेरे लिए किसी एक जगह पर आकर खत्म नहीं हो जाती .....।''[37]

''जगल गाथा'' की सुरसती भी ठेकेदारों के हाथों की कठपुतली नहीं बनना चाहती है। 'ये बाबू लोग ..... तो जंगल के बिगड़े बाघ से भी ज्यादा भूखा और खतरनाक होता है। हजम कर जायेगा और डकार भी नहीं लेगा।'[38] वह ठेकेदारों के बहकावे में नहीं आती।

नमिता सिंह की कहानी 'दर्द' की नारी पात्र रमिया भी ऐसी ही नारी है जो अन्याय को सहन नहीं कर पाती है। जब सुन्दरी को उनका बेटा पीटता है तो वह होश खो देती है। उसका विद्रोह अपने पुत्र, पति और समूची बिरादरी से भी होता है। मुरारीलाल को धमकाते हुए वह कहती है, ''तुम्हारा लोंडा जब बाबू लाल चमार की लड़की को लेकर भाग गया तब तुमने खुद मदद की। उन्हें अपने घर मे रखा और फिर छुपाकर स्टेशन तक पहुंचाकर आए। तब तुम्हारी नाक उंची हुई थी। लम्बा बख्त बीत गया तो तुमने सब भला दिया। तुम्हारा यह कारनामा बड़ा पुन्न का काम हो गया और मेरी दुखियारी सुन्नरी ने एक गलती कर दी तो वह ऐसा पाप हो गया।वह न्याय को सब के लिए बराबर मानती है। ''तुम लोग गलत करो तो वह सही और सुन्नरी ने कर दिया तो गलत हो गया। तुम चमार की लौंडिया भगा लाओ तो सब ठीक। तुम्हारी लौंडिया किसी के साथ चली जाये तो बहुत गलत।''[39] अब वह केवल अपने प्रति हुए अन्याय का ही नहीं बल्कि दूसरे कमजोर वर्ग पर हुए अन्याय का भी विरोध करती है।

लेखिका जगत की कहानी समाज के प्रत्येक भाग में से नारी सत्य को पकड़ती है। यह कहानी नारी की विवशताओं और उसके जाग उठे स्वाभिमान की कहानी है। ''गूंगा आसमान'' की मेहरअंगीज अपने पति द्वारा घर में लाई गई विधवा, बेसहारा औरता को सीनाजोरी से उठाकर, उनसे निकाह पढ़वाकर, अपने गुनाहों को सवाब में बदल, अनैतिक को नैतिक बना, गैरकानूनी हरकत को कानून के दायरे में डाल, रोज जन्नत में घूमने का दावा करने और हूरों को बेमौत मारने का विरोध करती है। उसने निकाहनामे फाड़ते हुए कहा, ''यह कैसा निकाह हुआ, जो लड़की की मरजी से न होकर मर्द की हवस से हो''[40] वह उन तीनों को घर से भागने में मदद करती है।

''फैसला'' कहानी में ग्राम–प्रमुख के सार्वजनिक अनाचार से क्षुब्ध उसकी पत्नी व्यक्तिगत रूप में उसके प्रति सच्ची रहते हुए भी चुनाव में अपना मत उसके विपक्ष में देती है। वह औरों के लिए भी रास्ता खोल देती है, ''सब जनी सुनो, सुन लो कान खोल के। बरोबरी का जमाना आ गया है। अब ठठरी बंधे मरद माराकूटी करें, गारी–गरौज दें, मायके न भेजें, पीहर से रूपइया–पइसा मंगवावें, तो बैन सूफी चली जाना बसुमति क ढ़िग।''[41] बसुमति ने ग्राम महिलाओं को एक नया रास्ता दिखाया है।

सृष्टि में जितने भी जीव है, सब स्वतन्त्रता से जीना चाहते हैं। परन्तु नारी अगर स्वतंत्रता की बात करे तो, उसे उसकी उच्छृंखलता से जोड़कर देखा जाता है। जबकि स्वतन्त्रता की चाह बहुत स्वाभाविक हैं। इस के लिए वह किसी को नुकसान नहीं पहुंचाती, आवारा–गर्दी नहीं करती, बस सहज रूप से खुली हवा में सांस लेना चाहती है। अगर वो ऐसा करना चाहती है तो उसे बुरी लड़की या औरत की संज्ञा दी जाती है। 'एक कोई दूसरा' की नीलांजना का कहना, ''मैं बुरी नही हूं, केवल पूरी तरह जीने का प्रयत्न कर रही हूं। मुझे किसी भी प्रकार की आर्थिक चिंता नहीं, मेरे लिए उपयुक्त वर की तलाश जारी है। यदि इस अंतराल को मैं हंसी–खुशी से जिन्दगी को बिल्कुल सीरियसली न लेकर बिता रही हूं तो कुछ बुरा नहीं कर रही।''[42] दरअसल यह उसकी स्वाभाविक इच्छा है, परन्तु इसके लिए भी उसे समाज को सफाई देनी पड़ेगी।

अतः महिला कहानीकारों की कहानियां का सकारात्मक पक्ष है, नारी का अपने अस्तित्व के साथ सामने आना। वह शोषण का विरोध करती है, अन्याय, अत्याचार के प्रति विद्रोह करती है, अपने जीवन में अनावश्यक हस्तक्षेप का विरोध करतो है और देह को पुरुष की नही बल्कि अपनी सम्पति समझती है। इससे उसके अन्दर आत्मविश्वास भर गया है। वह आर्थिक परनिर्भरता की बेड़ियां भी काट फेंकना चाहती है, ताकि किसी पर बोझ ना रहे। अब वह शादी को ही अपना अंतिम लक्ष्य न मान, दूसरे क्षेत्रों में भी अपनी भागीदारो व सक्रिय उपस्थिति चाहने लगी है। इसमें शायद कहानीकार का महिला होना भी नारी की भावनाओं को गंभीरता से सामने रखने में मददगार हुआ है क्योंकि एक द"ाक और एक पीडित होने में भेद होता है।

समकालीन साहित्य में सकारात्मक पक्ष है, नारी का अपने अस्तित्व के साथ सामने आना। वह शोषण का विरोध करती है, अन्याय अत्याचार का विद्रोह करती है, अपने जीवन में अनावश्यक हस्तक्षेप का विरोध करती है और देह को पुरुष की नही बल्कि अपनी सम्पति समझती है। इससे उसके अन्दर आत्मविश्वास भर गया है। वह आर्थिक पर निर्भरता की बेड़ियां भी काट फेंकना चाहती है, ताकि किसी पर बोझ ना रहे। अब वह शादी को ही अपना अंतिम लक्ष्य न मान, दूसरे क्षेत्राों में अपनी भागीदारी और सक्रिय उपस्थिति चाहने लगी और 'समकालीन साहित्य' उसका सहयोग करने में तत्पर लगता है।

---

1 पायदान : सोना चौधरी, 2002, पृ॰ 12

2 हवेली से बाहरः रामकुमार राकेश, 2002, पृ॰ 54

3 ठंडी आग : डॉ॰ इन्द्रपाल सिंह, 1990, पृ॰ 20

[4] पासंग : मेहरूनिन्सा परवेज, 2004, पृ॰ 183
[5] अभियान : निलय उपाध्याय, 2002, पृ॰ 21
[6] बोन्साई : कनकलत्ता, 1996, पृ॰ 29
[7] इदन्म्म : मैत्रोयी पुष्पा, 1994, पृ॰ 269
[8] अगल पाखी : मैत्राीय पुष्पा, 2001, पृ॰ 70
[9] आओ पेपे घर चले : प्रभा खेतान, 1990, पृ॰ 42
[10] छिन्नमस्ता : प्रभा खेतान, 1993, पृ॰ 89
[11] अल्मा कबूतरी : मैत्रोयी पुष्पा, 2000, पृ॰ 76
[12] बेतवा बहती रहे : मैत्रायी पुष्पा, 2000, पृ॰ 147
[13] चाक : मैत्रोयी पुष्पा, 1997, पृ॰ 7
[14] झूला नट : मैंत्रोयी पुष्पा, 1999, पृ॰ 12
[15] वही, पृ॰ 74
[16] हवेली से बाहर : राजकुार राकेश, 2000, पृ॰ 28
[17] दौड़ः ममता कालिया, 2003, पृ॰ 68
[18] वही, पृ॰ 73
[19] गली नं0 तेरह : ज्ञान प्रकाश विवेक, 1998, पृ॰ 47
[20] वाह कैंप : द्रोणवीर कोहली, 1998, पृ॰ 40
[21] अगन पारवी : मैत्रोयी पुष्पा, 2001, पृ॰ 72
[22] विजन : मैत्रोयी पुष्पा, 2002, पृ॰ 17'18
[23] छिनमस्ता : प्रभा खेतान, 1993, पृ॰ 13
[24] कठगुलाब : बुदृला गर्ग, 1996, पृ॰ 49
[25] कठगुलाब : बुदृला गर्ग, 1996, पृ॰ 56
[26] माई : गीतांजली श्री, 1993, पृ॰ 18–20
[27] समझौते से पहले : मनमोहन सहगल, 2003, पृ॰ 28
[28] पायदान : सोना चौध्री, 2002, पृ॰ 13
[29] पायदान : सोना चौध्री, 2002, पृ॰ 75
[30] कठगुलाब : बुदृला गर्ग, 1996, पृ॰ 15
[31] अन्तः स्वर, ;रिक्ती, उषा महाजन, लेखिका संघ, पृ॰ 57
[32] अब्बू ने कहा था, चन्द्रकान्ता, पृ॰ 65
[33] गमे–हयात ने मारा ;पुतले : राजी सेठ, 2006, पृ॰ 57
[34] ऐ लड़की, कृष्णा सोबती, पृ॰ 8,पृ॰ 13
[35] ऐ अहिल्या, हंस, अक्तूबर, 1996 पृ॰ 9
[36] खुदा की वापसीः नासिरा शर्मा–हंस, जनवरी, 1997 पृ॰ 61
[37] मेरे लिए नहीं, राजो सेठ, सहारा समय, 27 मई 2006
[38] जंगल गाथा ;दर्द, नमिता सिंह, पृ॰ 23
[39] नील गाय की आंखेः नमिता सिंह, पृ॰ 133–134
[40] गूंगा आसमानः नासिरा शर्मा, पृ॰ 42
[41] ललमनियां ;फैसलाः मैत्रायी पुष्पा, पृ॰ 10
[42] एक कोई दूसरा, उषा प्रियंवदा, पृ॰ 15